मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक :

रम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक :

सेठ दुर्गादास जी

३	जून १९७६	संख्या २

आत्मिक अवस्था

लेखक : सेठ दुर्गा दास साहिब, चण्डीगढ़ ।

अध्यात्मिकता का समझना सरल काम नहीं है। निवृत्ति मार्ग और प्रवृत्ति मार्ग दोनों बिलकुल अलग २ मार्ग हैं। एक संसार में फंसा हुआ संसारी मार्ग है। दूसरा संसार से अलग है। गृहस्थी को इस बात का ज्ञान नहीं हो सकता है कि एक विरक्त पुरुष, अध्यात्म प्रिय सन्यास और निवृत्ति मार्ग को अपनानेवाला शांति का आनन्द लेता है। शान्ति एक विलक्षण वस्तु है जो कि बहुत थोड़े व्यक्तियों को प्राप्त होती है।

क्या गुरु के शरीर से प्यार और गुरु के शरीर से सम्बन्ध जोड़ना आत्मिक अवस्था है ? क्या गुरु के देह छोड़ जाने के बाद चेले का पहले की तरह गुरु के साथ सम्बन्ध रखना अत्मिक उन्नति है ? यह एक बड़ा भारी प्रश्न है जिसका समाधान आवश्यक है। कबीर साहिब फरमाते हैं :—

गुरु किया है देह को, सतगुरु चिन्हा नाहीं।
भवसागर के धार में, फिर फिर गोता खायें।
गुरु को मानुष जानते, सो नर कहिए अन्ध।
दुखी होयें संसार में, आगे जम का फंद।

आत्मिक अवस्था या आत्मिक उन्नति वह अवस्था है जिस में जीव अपने शरीर और मन से बेखबर होकर अपनी सुरत में स्थिर हो जाता है और प्रकाश में ठहरने का यत्न करता है। सुरत इस अवस्था का आनन्द लेती है। इस अवस्था में चिन्ता नहीं, दुःख नहीं, सुख नहीं, प्रेम नहीं, द्वेष नहीं, दिन नहीं, रात नहीं, भक्ति नहीं, ज्ञान नहीं और कर्म नहीं। यह एक ऐसी अवस्था है जिसका वर्णन कठिन है, गूंगे का गुड़ है, जबान बन्द और मस्ती का आलम होता है। नानक साहिब क्या फरमाते हैं :—

तीन बन्द लगाय कर, सुन अनहद टनकोर।
नानक सुन्न समाध में, नहीं सांझ नहीं भोर॥

गुरु की मौत पर रोना, आंसू बहाना, दुःखी होना और जदाई अनुभव करना संसार है। गुरु की मौत पर कई नदी में छलांग लगाकर डूब गये। पता लगते ही कई बेहोश हो गये। किसी ने गुरु की

यादगार स्थापित कर दी। किसी ने अपने गुरु का पलंग, कुर्सी, वस्त्र आदि सम्भालकर यादगार रख लिया। गुरु की हड्डियों की नमायश की जाती है। हड्डियों के दर्शन कराये जाते हैं। हड्डियों पर फूल चढ़ाये जाते हैं। भेंट ली जाती है। ऐ अज्ञानी जीवो! तुम्हारी दशा सोचनीय है। ऐ कृपालु! इनपर दया कर। इतना अंधेरा, यह कहां की अध्यात्मिकता है कि अज्ञानी जीव के अज्ञान का अनुचित लाभ उठाया जाता है। जुलम है।

दूसरा अपनी पत्नी की मौत पर रोता है। इसकी जुदाई अनुभव करता है। ताज महल इसकी याद में बनवाता है। इन दोनों में क्या अन्तर है। दोनों ही एक हो जगह पर हैं दोनों संसारी हैं और संसार में बन्धे हुए हैं।

गुरु से प्यार और गुरु के शरीर से प्यार संसारी है, दिखावा है। केवल मन का खेल है। जोश में अज्ञानता में अज्ञानी जीव ऐसी हरकत करते हैं जो अध्यात्मिकता में अप्रिय है। अध्यात्मिकता दिखावे की वस्तु नहीं है। यह तो जब्त सिखाती है। जब्त में अध्यत्मिकता है। महाराज जी फरमाया

करते हैं कि मेरी मौत पर जिसकी आंखों में आंसू न आयें वही मेरा सच्चा शिष्य होगा। उसको मेरी शिक्षा का ज्ञान हो चुका है।

एक आदमी अपने छोटे बच्चे से जो बहुत ही सुन्दर गोरा रंग है, चौड़ा चेहरा, नूरानी चमकदार आंखें, शरीर गोल और हम शक्ल, हम जाति, हम कौम है, बहुत प्यार करता है। ऐसे बच्चे से मानव का क्यों प्यार न हो क्योंकि प्रेम से आनन्द और खुशी मिलती है। सुनिये, कैसी खुशी और आनन्द है।

खुश मुजस्सम खुशी खुशी है, देखा जिसने मिली खुशी है।
निर्मल चित्त बुद्धि स्थिर है, दुःख सुख के परे हालत यही है।
किया प्यार किसी ने प्रेम ले लिया, चूमा प्रेम से दिल भर गया।
यह अवस्था सन्तन ने बहुत ऊंची गाई, सतपद के बारे यह अवस्था बताई।
निर्भय, निर्वैर अडोल वह रहता, यह हालात बच्चे के कौन नहीं कहता।
खवाइश न हुई कभी किसी चीज की, भूख लगी मां दौड़ी आई।
मस्ती मस्ती और मस्ती नित है, बन जाय वह बच्चा खुश बखत है।
चाहे दरस प्रभु का बच्चे को देख ले, आनन्द ले, खुशी ले बेफिकरी ले ले।

ऐसे बच्चे की मौत पर बाप रोता है, पोटता है, चिल्लाता है, आंसू बहाता है और बेहोश हो जाता है एक चेले की अपने गुरु की मौत पर यही दशा होती है तो दोनों में कोई अन्तर न रहा। दोनों संसारी हैं। आत्मिक अवस्था की इन दोनों को हवा तक नहीं लगी। बिलकुल कोरे के कोरे हैं। गुरु की ज़ात को अपने व्यवहार से बदनाम कर रहे हैं। चेले कहलाने के अधिकारी नहीं हैं।

हां धन से, मन से और तन से गुरु की सेवा करना, गुरु की आज्ञा मानना, गुरु भक्ति है। यह कर्म कांड है। यह आत्मिक अवस्था की ओर एक पग है। सच तो यह है। गुरु के बचनों पर अमल करना ही गुरु की असली सेवा है। गुरु के गुणों को ग्रहन करना और इन गुणों को अपने मन में स्थान देना गुरु की सेवा है। गुरु से प्रेम है।

देहधारी का प्रेम नाशवान है। क्योंकि शरीर नाशवान है। इसलिए शरीर से प्रेम किया हुआ भी नाश को प्राप्त होगा, 'उपजे सो विनसे' के सिद्धान्त अनुसार यह बिलकुल ठीक है। आत्मिक अवस्था तो नाश होने वाली नहीं है। आत्मा अजर और अमर

है। इसलिए शरीर से प्रेम करना आत्मिक अवस्था न हुई। यदि मन से गुरु को प्यार करते हो। मन भी बनता है। यह भी नाशवान है। मन से प्यार भी असफल रहा क्योंकि नाश को प्राप्त होगा। इसके बारे कबीर साहिब फरमाते हैं।

जाप मरे अजपा मरे, अनहद भी मर जाय।
सुरत समानी शब्द में, ताको काल न खाय॥

काल से बचने का केवल यही एक मार्ग है। जन्म मरण से रहित होना, छुटकारा पाना और मुक्ति पाना ही अध्यात्मिकता है। इसको प्राप्त करने के लिए यही एक विधि है, "सुरत समानी शब्द में"।

गुरु की हस्ती ज़ात में गुम होना है वे धुर पद के वासी, हकीकत, भेद और सत के ज्ञाता, आज़ाद विचार और किसी धर्म पंथ के बन्धन से आज़ाद खियाली उनकी शान है। घृणा, द्वेश और हठधर्मी उनके पास नहीं फटकती दूसरों को बन्धन से छुड़ाने वाले और सत्य स्वरूप होते हैं गुरु के बारे कहा गया है।

गुरु और पारस में यही अन्तरो जान।
पारस लोहा कंचन करे, गुरु कर ले आप समान ॥

वह ऐसे गुरु की शरन में आया। इसको गुरु ने अपनी छाती से लगाया। इसका अन्धकार मिटाया, ज्ञान दिया। इसको भेद और सच्चाई बताई। जो चेला ऐसे गुरु की मृत्यु पर रोता है इसकी याद में तड़फता है या बेसुद्ध हो जाता है वह अपने गुरु का शिष्य कहलाने का अधिकारी नहीं है।

सत्गुरु ने मुझपर बहुत दया की। मैं दीन होन था। मुझे अपनी शरन दी। मैं दुःखी था। मुझे अपनी छाती से लगाया। अपने मनोहर बचनों से मुझे नया जीवन बख्शा। इनकी अपार दया से मेरी आँख खुल गई। इसलिए मैं इनका धन्यवादी हूं। इनका दिल से मान करता हूं और आदर करता हूं, सत्कार करता हूं।

वरना कबीर साहिब तो फरमाते हैं कि गुरु का विचार ही बन्धन है।

गुरु, माथे से उतरा, सर से टली बला।
जैसा है तैसा रहे, कहै कबीर विचार।

यह अध्यात्मिकता की चोटी है।

To be born in any religion is a blessing.
To die in any religion is a curse.

जब गुरु, देह में है, इसकी सेवा करो। देह छोड़ जाने के बाद उसका उपकार मानो। कृतघन मत बनो।

सौ वर्षकी इबादत से अढ़ाई घड़ी का सत्संग उत्तम

सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक १४ जनवरी १९७६

माघ महीना अति रस भरा, काया बन मन गुलशन हरा
चमन चमन फुलवारी खिली, बाग बाग नहरें अब चली ।
गुरु भक्ति और पौद प्रेम की, क्यारी धीरज दया नेम की ।
अस अस लीला देखी घट में, मन माली सींचे छिन छिन में ।
नैनन आगे पंच रंग फूल, पल २ निरखत तिल तिल झूल ।
तत्व पिर्थवी भिन होय दरसा, ऋतु वसंत फूली मन सरसा ।
झलक जोत और उमंड घटा की, रिमझिम बरसे बूंद अमी की ।
सहस धार दल सहंस कंवल में, उठें तरंगें फैलें मन में ।
मन चढ़ चला महल अपने में, उलटा पहुंचा गगन मंडल में ।
गगन मंडल लीला इक न्यारी, शब्द गुरु की खिल रही क्यारी ।

मूल नाम और शाखा धुन की, फूली जहं फुलवार त्रिगुन की।
यह लीला घट माहिं निहारी, महिमा नाम कहा कहुं भारी।

राधास्वामी। ऐ धार्मिक और पन्थिक संसार के अनुयायो! छोटी आयु से मेरे अन्तर एक तलाश थी। मेरी मैं कुछ चाहती थी। जो कुछ मैं चाहता था उसको राम, कृष्ण और भगवान मानता था और उसके दर्शन की इच्छा थी। २४ घण्टे लगातार रोने के बाद मेरा एक दृश्य मुझे हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गया। उन्होंने मुझे सन्तमत की शिक्षा दी। अब जो आदमी इस बाणी को पड़ेगा उसके अन्तर यह जज्बा पैदा होगा कि जो कुछ इसमें लिखा हुआ है उसको देखूं। मेरे अन्तर यह जज्बा था कि मैं उसे देखूं। मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूंगा और जो कुछ मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊंगा। इसलिए जो कुछ मेरो समझ में आया वह कहता रहता हूं मगर मैं यह दावा नहीं करता कि जो कुछ मैंने समझा है वही ठीक है। लेकिन मुझे इस अनुभव से शान्ति मिली है। यह जो बारह मासा है। मेरी समझ में यह बात आई है कि इस बारह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मासा में जो कुछ लिखा है यह हमारे शारीरक मानसिक और आत्मिक जीवन के बोध भानों से परे की अवस्था है। हाढ़ महीना में वह लिखते हैं।

प्रथम असाढ़ मास जग छाया, आसा धर जीव गर्भ समाया।

वह लिखते हैं कि जीव गर्भ में कैसे आया? हम वासना रूप से गर्भ में आये हैं। यह माघ महीने का शब्द है जो ऊपर लिखा गया है। मैं अपने आपसे कहता हूं कि फकीर! यदि झूठी हां में हां मिलाओगे तो कुष्टी होके भरोगे।

माघ महीना अति रस भरा, काया बन मन गुलशन हरा।

जब आदमी साधन करता है तो उसको क्या मिलता है? खुशी आनन्द और मस्ती। हजूर महाराज ने प्रेम बाणी में लिखा है कि अभ्यास के समय यदि तुमको खुशी मिलती है, कभी रोशनी दिखाई पड़ती है, कभी गुरु स्वरुप के दर्शन होते हैं और चिन्ता नहीं व्यापती तो समझो कि तुम्हारा अभ्यास ठीक है। चिन्ता रहित, शोकरहित होने, खुशी और आनन्द को प्राप्त करने के लिए हम अभ्यास करते हैं। उन्होंने इस खुशी को अलंकार रूप में वर्णन किया है। यदि अभ्यास में तुमको खुशी आनन्द

और उत्साह नहीं मिलता तो तुम्हारा अभ्यास ग़लत है। इस अभ्यास से कोई लाभ नहीं। हमारा जो Self है वह खुशी सुख और आनन्द चाहता है। जो सांसारिक वस्तुओं से आनन्द प्राप्त करते हैं वे भूले हुए हैं। क्यों ? आज धन है तो कल को हो सकता है कि न रहे आज संतान है कल को शायद न रहे। तो यह खुशी समाप्त हो जायेगी। इसलिए यह मार्ग किन के लिए है ?

विषयो से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन संतान प्रीत नहीं जाके, जगत पदार्थ चाह न ताके।
तन इन्द्री आसक्त न होई, नींद भूक आलस जिन खोई।
विरह वाण जिन हृदय लागा, खोजत फिरे साध गुरु जागा।

जिसको अकारण वैराग्य नहीं है उसको इस नाम से कोई लाभ नहीं होगा। ऐसे आदमी इस वाणी की बातों का अनुभव नहीं कर सकते क्योंकि उनका मन संसार की नाशवान वस्तुओं में फंसा हुआ होता है। इसलिए मैं किसी को नाम नहीं देता। किसको नाम दूं ? संसार तो संसार के चक्कर में है। ऐसे आदमियों के लिए नाम कैसा ? उनके लिए है सत्संग। यह संसार तो काया और माया का संसार है। आज दुख

है तो कल को सुख है, आज धनी है तो कल गरीब है। इसलिए सन्तों ने लोगों को यह शिक्षा दी और यह शिक्षा है भी ठीक। नाम चाहे किसी से भी लिया हुआ हो और चाहे किसी नाम से भी तुम मालिक को याद करते हो मैं इस बात की परवाह नहीं करता। मैं यह चाहता हूं कि तुमको खुशी मिले।

चमन चमन फुलवाड़ी खिली, बाग़ बाग़ नहरें अब चली।

इस बाणी को पढ़कर लोग अन्तर में फुलवाड़ियें, बाग़ बागीचे और नहरें नदी आदि देखने का यत्न करते हैं मगर यह तो अलंकार है। जैसे रेडियो पर कभी २ यह सुना करते हैं कि मैं चान्द का टिक्का लगांऊंगी, तारों के बुन्दे पहनूंगी और सूर्य की चादर ओढ़कर अपने यार को मानने जाऊंगी। यह रोचक शिक्षा है यथार्थ नहीं है। अन्तर में न बाग़ है न फूल हैं न नदिएं हैं और न नहरें हैं। अन्तर में जो बाग़ फूल, या नदी आदि तुमको दिखाई देते हैं ये केवल Suggestions & Impressions हैं। केवल संस्कार हैं जो तुमने पढ़े हैं या सुने हैं। इसके सिवा और कुछ नहीं है मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा और दूसरे हज़ूर दाता दयाल जी

महाराज ने मुझे आज्ञा दी थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। ग़लत है या ठीक है यह मुझे पता नहीं मगर मेरी नीयत बिलकुल साफ है। मैंने स्वयं अपने आप में बड़े २ दृश्य, चमत्कार नदी समुंदर और रोशनियां देखीं मगर अनुभव यह सिद्ध करता है कि अन्तर में न पेड़ हैं न फूल हैं, न दरिया हैं और न नहरें हैं। तुम स्वयं सोचो कि इस छोटे से सिर में नहरें कैसे चल सकती हैं और पहाड़ कैसे आ सकते हैं। यह केवल संस्कार हैं। तुम स्वप्न में कई कुछ देखते हो, क्या वे सचमुच सब कुछ होता है ? नहीं ! ये सब संस्कार हैं और माया है।

गुरु भक्ती और पौद प्रेम की।
क्यारी धीरज दया नेम की।

गुरु भक्ती से संसार मिलता है और विचार मिलता है मगर मिलता तब है यदि हमने विश्वास किया हो और प्रेम किया हो। प्रेम और भक्ति के बिना तुमको किसी की बात का विश्वास नहीं आयेगा। जिससे तुम प्रेम करते हो वह जो कुछ भी कहेगा तुम उसको सत मानोगे और जब सच मानोगे तो जो कुछ उसने कहा है वही तुम्हारे अन्तर आयेगा और वही तुम्हारे अन्तर फुरेगा।

अ : अस लीला देखीं घट में, मन मालो सींचे छिन छिन में ।

वह फरमाते हैं कि अन्तर में जो लीला तुमको दिखाई देती है वह सब तुम्हारे मन माली के कारण और मैं भी यही कहता हूं कि अन्तर में जो देवी देवता गुरु या जो कुछ भी तुम देखते हो ये केवल सस्कार हैं। इन सबको बनाने वाला तुम्हारा मन है। इन में असलियत कुछ भी नहीं है। अन्तर न पेड़ हैं न फव्वारे हैं। इस बाणी को सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई कि जो कुछ मेरा अनुभव है वही स्वामो जो महाराज ने कहा है इसलिए मेरा अनुभव ठीक है।

नैनन आगे पंचरंग फूल, पल पल निरखत तिल तिल झूल ।

पंचरंगी फुलवाड़ी क्या है? हमारे शरीर में पांच तत्व काम करते हैं। हर एक का रंग जुदा है। मिट्टी का रंग पीला है पानी का रंग नीला है, वायु का भी रंग है आकाश का भी रंग है। अन्तर में जब हम इकठ्ठे होते हैं तो अन्तर में हमको यह पांचों तत्वों के रंग या रंग बरंगे दृश्य दिखाई देते हैं। यह है पंचरंग फूल।

तत्व पिर्थवी भिन होय दरसा, ऋतु बसंत फूली मन सरसा ।

बंसत के ऋतु में खुशी मिलती है। तात्तपर्य यह है कि हम अपने अन्तर में इन दृश्यों को देखकर

खुश होते हैं। मैं भी होता था और तुम भी होते हो। शरीर में पांच स्थूल तत्व हैं। मन में पांच सूक्ष्म तत्व हैं इनके कारण हो अन्तर में नाना प्रकार के रंग रूप दिखाई देते हैं और यह सारा मन का खेल है बाहर में भी यह रंग हैं और अन्तर में भी है।

झलक जोत और उमंड घटा की, रिमझिम वरसे बून्द अमी की।

अमी है अमृत। हमारे जीवन के होने का जो बोध है या हमारा हैपना है उसका नाम अमृत है। अन्तर में इसको देखकर हमको मस्ती मिलती है आनन्द और खुशी मिलती है

सहस धार दल सहस कंवल में, उठें तरगें फैलें मन में।

ये सहस दल कंवल के दृश्य हैं और अभ्यासी सारा जीवन इसी में मस्त रहते हैं। सहस दल कंवल है हजारों पत्तियों वाला फूल। यह फूल हमारा मन है। इस मन में से अनेक प्रकार के भाव और विचार निकलते हैं। अन्तर में जो दृश्य दिखाई देते हैं, हिन्दु को राम दिखाई देता है कृष्ण दिखाई देता है किसी को कोई देवी या देवता दिखाई देता है, किसी को गुरु स्वरुप दिखाई देता है। ये सब सहस दल कंवल के दृश्य हैं और आदमी इन

दृश्यों में आनन्द लेता है। बाहर में भी पांच तत्व के दृश्य हैं ओर अन्तर में भी पाँच सूक्ष्म तत्वों के हम दृश्य देखते हैं। इन दृश्यों के कारण हम बाहर में भी और अन्तर में भी दुख और सुख उठाते हैं। कोई सुन्दर वस्तु देख ली तो प्रसन्न हो गये और वह नाश हो गई तो दुखी हो गए। गुरु स्वरुप के अन्तर में दर्शन होगये तो खुश हो गये और न हुए तो उदास हो गये।

मन चढ़ चला महल अपने में, उल्टा पहुंचा गगन मंडल में।

इन दृश्यों को देखते हुए मन अपने मंडल की ओर चला। मन का घर कौन सा है? जबतक मन त्रिकुटि के दृश्य देखता है तो वह अपने घर में नहीं है। वह बाहर मुखी है। जब मन इस अवस्था को छोड़ जाता है तो फिर वह अकेला हो जाता है और हज़ारों प्रकार की वृत्तियों को छोड़ जाता है।

गगन मंडल लीला इक न्यारी, शब्द गुरु की खिल रही क्यारी।

त्रिकुटि के स्थान की आवाज़ को हिन्दुओं ने बम २ कह दिया या ओं ओं कह दिया और मुसलमानों ने उसे अल्लाहू कह दिया और सिखों ने इसे

वाहगुरु कह दिया। आवाज़ की असलियत को तो वर्णन नहीं किया जा सकता है, जैसे घण्टा की आवाज़ को टन टन कह कर प्रगट किया जाता है।

मूल नाम और शाखा धुन की, फूली जहं फुलवार त्रिगुन की।

कौन समझेगा इस बाणी को। इन बणियों को पढ़कर संसार पागल हो गया। न घर के रहे न बार के रहे। वहां सतोगुण रजोगुण और तमोगुण की फुलवाड़ी खिलती है। यह गुण क्या हैं? तमोगुण स्थूल बोध भान हैं। मन के बोध भानों का नाम रजोगुण है जो कि सूक्ष्म है और कारण बोध भानों का नाम सतोगुण है। वहां मन अपने अन्तर त्रिगुणात्मिक जगत के प्रभाव रखता है और उनका अनुभव करता है।

यह करनी का भेद है नाहीं बुद्ध विचार।
कथनी तज करनी करे तब पावे कुछ सार।

जब आदमी यहां पहुंच जाता है तो भी वह काल चक्कर से नहीं निकलता। ओं की धुन सुननेवाला त्रिगुणात्मिक जगत में है। वह जन्म मरण से रहित नहीं हो सकता।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

यह लीला घट माहिं निहारी, महिमा नाम कहा कहुं भारी।

यहां पहुंच जाने से नाम की महिमा का पता लगता है और आदमी को खुशी और आनन्द मिलता है।

सरगुण नाम और सरगुण रुपा. वहां तक देखा मन का सूता।

वहां सरगुण नाम है अर्थात देह वाला है। जिस वस्तु को तुम अपने अन्तर देह धारी देखते हो वह सरगुण है। गुरु स्वरुप राम, कृष्ण, देवी देवता, पेड़, तालाब जो कुछ भी तुम अपने अन्तर देखते हो। यह सब सरगुण है और यह सब पृथ्वी तत्व का खेल है।

अब आगे सूरत चढ़ चाली, पैठी जाय सुखमना नाली।

इंगला, पिंगला और सुषुम्ना तीन नाड़ियें हैं। जिनके अन्तर परोपकार, नेकी, दुखियों की सेवा और शुभ विचार होते हैं उनकी सुरत इंगला नाड़ी में जाती है। जिनके विचार गंदे होते हैं उनकी सुरत पिंगला नाड़ी अर्थात बाईं ओर जाती है। इस वास्ते सन्तमत में बाईं ओर की आवाज़ सुनने की आज्ञा नहीं है। जब रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण की दिशा को छोड़ दोगे, संसार की ओर से निपट

जाओगे और मालिक को मिलने की कामना होगी तब सषुम्ना नाड़ी में जाओगे। संसारिक इच्छायें रखने वाला सषुम्ना नाड़ी में नहीं जा सकता। शरीर के अन्तर भिन्न २ नाड़ियें हैं, कोई बलग़म की नाड़ी है, कोई मूत्र की नाली है, कोई टटी की नाली है। इसलिए जब तक सत्संग करके पहले यह समझ नहीं आयेगी कि बुराईयों को कैसे छोड़ना है तब तक नाम का अधिकारी नहीं बन सकता। इसलिए मैं नाम नहीं देता केवल सत्संग कराता हूं। सषुम्ना नाड़ी में सुरत तब जायेगी जब मन का बन्धन इस संसार से नहीं रहेगा। जब तक नेकी और बदी दोनों से तुम्हारे चित्त की वृत्ति जुदा नहीं होगी तब तक तुम्हारी सुरत आगे नहीं जायेगी। दाईं ओर नेकी के विचार और बाईं ओर बदी के विचार हैं इसलिए गृहस्थियों को जो आगे नहीं जा सकते, परोपार और दान आदि की आज्ञा है।

सुखमन में निज मन दरसाना, निज मन आगे निरगुन जाना।
यह निरगुन वह सरगुन देखा, दोनों घाट भिन्न कर पेखा।

यहां तक सारे का सारा खेल सरगुण का था अर्थात रुप बनते थे। इससे आगे निर्गुण है। वह फरमाते हैं कि मैंने अपने अन्तर सरगुण और निरगुण दोनों का तमाशा देखा। दोनों एक बराबर हैं।

अब आगे पांजी इक गाऊं, गंधर्व नाल के मध्य चढ़ाऊं।

राग गाने वाले को गंधर्व कहते हैं। जब रंग रूप छोड़ कर सुरत आगे चली जाती है तो वहां शब्द को सुनने से उसे आनन्द और सुख मिलता हैं।

नाल भुवंगन वायें त्यागी, दहने नाल धुन्धरी जागी।

भुवंगन नाम है सांपनी का उन्होंने बाईं ओर के विचारों को सांपनी कहा है। इसका भाव यह है कि बुराईयों को छोड़कर सुरत आगे चली गई।

जागत नाल काल मुख मूंदा, घाट अठासी नाका रुंधा।

जब सुरत 88 घाट अर्थात अनेक प्रकार की वृतियों को छोड़कर आगे शब्द में चली गई तो काल का मुंह बन्द कर दिया। काल है हमारा मन। हमारा मन जो भान्ति २ के संकल्प करता है वह अब संकल्प नहीं करता। मन सुन और महासुन्न में आ गया या यूं समझो कि निर्विकल्प समाधी लग गई।

सिंह पौल डिंग झंझरी निरखी, सेत पदमनी जाली परखी।

सेत का अर्थ है सफेद। आगे जाकर सफेद रंग का प्रकाश होता है और उसमें बाजा बजता है। इस जगह आकर मन चक्कर समाप्त हो जाता है।

सुन्न ताल जहं धुन भंडारा, छजली कजली दीप निहारा।
सागर नागर जा कर झांका, कुरम शेष अक्षर जहां थाका।

यह केवल शब्दों का जाल है। जब सुरत यहां पहुंच जाती है तो प्रकाश देखने और शब्द को सुनने से आनन्द मिलता है। वहां न मन है और न ही कोई गुण है। वहा आत्मा का अपना ही रूप होता है।

जहां सुंरगी दोप झरोखा, सुरत अड़ी जाय द्वारा रोका।

यहां आकर मन समाप्त हो जाता है। यह भंवरगुफा है। यहां आकर आदमी अपने रूप में ठहरने का यत्न करता है।

संदली चंदली चौकी डारी, सुरत मंडली पाट खुलारी।

संदल क्योंकि ठन्ठा होता है और सुगन्ध वाला होता है उससे शान्ति मिलती है ऐसे ही सुरत जब अपने भंडल में चली जाती है तो उसको वहां शान्ति मिलतो है। शारीरिक बोध भान और हैं, मानसिक

और हैं, आत्मिक और हैं और सुरत के बोध भान और हैं। यह करनी का विषय है।

कुंडल दीप छबीली रमना, दामिन दीप सोत का झरना।

वहां खुशी और आनन्द मिलता है। यही बात हजूर बाबा सावनसिंह जो महाराज ने कही थी कि सतलोक में आनन्द ही आनन्द है। इसके सिवा उन्होंने सतलोक की कोई और अधिक व्यख्या नहीं की। हिन्दु शास्त्र ब्रह्मसूत्र में लिखा है कि अन्नमय कोष में यह होता है, प्राणमय कोष में यह होता है मनोमय कोष में यह होता है और आगे चलकर लिखते हैं कि विज्ञान मय कोष का सिर खुशी है, कन्धे संतोश हैं पेट आनन्द है और ब्रह्म उसकी दुम है। ये जितनी योग की मंजले हैं यह हमारे जीवन और हस्ती के बोध भानों का वर्णन है। उनको वर्णन करने के लिए ऋषियों और सन्तों ने अपने २ शब्द प्रयोग किये हैं। लेकिन बात एक ही है केवल वर्णव शैली भिन्न २ है।

जिस अवस्था का यह वर्णन है यह विज्ञान मय कोष है। सोत का झरना क्या है ? जो मैंने समझा है वह कहता हूं। हमारा आत्मा जब निर्विकल्प समाधी

से आगे भंवरगुफा में जाता है तो उसके अन्तर से जो खुशी और आनन्द के बोध भान की धार निकलती है वह है झरना। जिस प्रकार बिजली चमकती है ऐसे ही वहां रौशनी होती है। ये सब आकाश तत्व के गुण हैं। सहसदल कंवल में सूक्ष्म तत्व जो पृथ्वी के हैं उनका अनुभव होता है, त्रिकुटि में पानी के सूक्ष्म तत्वों के अनुभव होते हैं, सुन महासुन्न में वायु के सूक्ष्म तत्वों के अनुभव होते हैं। क्योंकि वायु का कोई रूप नहीं है इसलिए सुन्न में कोई रंगरूप नहीं होता। भंवरगुफा में सूक्ष्म अग्नि तत्व के अनुभव होते हैं। इस समझ से कम से कम मेरी आत्मा को शान्ति मिलती है। इससे परे वह अवस्था है जहां से यह सूक्ष्म और कारण तत्व बनते हैं। वह है सतलोक। उसका नाश नहीं है मगर इससे नीचे सबका नाश है। जिस प्रकार बाहर में इन तत्वो का नाश है अर्थात पृथ्वी पानी में हल हो जाती है, पानी वायु में मिल जाता है, वायु अग्नि में मिल जाती है और अग्नि आकाश में मिल जाती है, ऐसे ही अन्तर में साधन करने वाले के सूक्ष्म पाँचों तत्वों की समाधि के समय परलय हो

जाती है। इसके बाद बाकी जो चीज़ रह जाती है वह है सत।

नीलम कुंड खन नल पाल, महाकाल रचिया जहां जाल।

यह भंवरगुफा है। सोहंगपुरुष है। 'मैं हूं"। इसमें से सारा संसार बना है। यदि मन में यह मैं न होती या अहंभाव न होता तो तुम्हारे वास्ते यह सारा संसार समाप्त हो जाता। इस स्थान पर जगत का अर्थात महाकाल का नाश हो जाता है। यही मैं ने कहा है कि जब सुरत इस जगह पहुंचती है तो निचले जितने भान हैं जोकि काल और माया है। ये सब समाप्त हो जाते हैं।

कंकन घाटी सुरत झुमाई, जाल काल सब दूर पड़ाई।

सन्त इससे आगे गये अपने मैंपने अर्थात अहंकार को छोड़ गये। अहंकार क्या है ? यह मेरा बाप है, यह मेरा बेटा है, यह मेरी सम्पति है यह मेरा धर्म है, यह मेरा कर्म है आदि २। ये सब अहंकार है। जहां भी मेरा तेरा पना है, यह सब काल की रचना है। आगे न मैं है न तू है। हस्ती अपने आपमें जाकर ठहर जाती है। जिस जगह से मैं निकलती है वह भंवरगुफा का स्थान है।

सेत धरन जहां लाल अकासा, हंस छावनी देख विलासा।

वहाँ सेत अर्थात सफेद रंग है और मामूली लाली झलकती है। वहां हंस रहते हैं। ऐ स्वामी जी! आपकी बाणी तो ठीक है। जो कुछ आपने कहा, वह है तो ठीक, मगर बाणी इस ढंग से लिखी गई है कि इसको पढ़कर संसार पागल हो गया। असल भाव को कोई समझ न सका। मैंने स्वयं इन दर्जों को देखने के लिए बारह २ घण्टे अभ्यास किया। वहां हंस क्या है? मैंने जो समझा है वह कहने का अधिकारी हूं। जिस प्रकार हमारे रक्त में सफेद और लाल कीड़े होते हैं और यदि ये कीड़े न हों तो रक्त पानी हो जायेगा और जीवन नहीं रहेगा। ऐसे ही उस मंडल की जो हस्ती है उसमें हस्ती के अणु होते हैं। जब तुम वहां पहुंचते हो तो तुम भी वहां अणु होते हो। वहां जो पहले हैं वे भी अणु हैं। वे हंस हैं। हंस आपस में मिलते हैं और खुशी लेते है मगर ज़बान नहीं होती। हंस न खाते हैं न पीते है, न बोलते हैं और न सोते हैं। हंसपना क्या है? जीवन की हस्ती का एक भाग है। हमारे अन्तर में वह हमारी सुरत है। सतलोक में जो अणु हैं वही हंस हैं। वहां

जाने से अनुभव और ज्ञान जागता है। सूर्य के अन्तर सूर्य की किरणों का जोड़ है। वही किरणें बाहर निकलती हैं। ऐसे ही उस लोक से जो किरणें निकलती हैं वे सुरतें हैं। जब वे वापस जाती हैं तो अपने जैसो किरणों से मेल खाती हैं। यह मेरी समझ में आया है। यदि कोई और हंस हैं तो मुझे पता नहीं। मैं चाहता हूं कि वर्तमान महात्मा और गुरु सच्चे बनकर पलेट फारम पर यह सचाई वर्णन करें कि उन्होंने अन्तर में क्या देखा।

हंस एक जानवर है जो दूध और पानी को जुदा कर देता है। ऐसे ही हमारी सुरत जब वहां पहुचती है तो काल माया से सार तत्व को जुदा करके उस सार तत्व को ग्रहन कर लेती है जिस प्रकार हमारे रक्त में यदि लाल और सफेद किटाणु नहीं हैं तो वह रक्त नहीं रहता पानो बन जाता है, जिससे हमारा जीवन समाप्त हो जाता है। ऐसे हो सतलोक में यदि अणु नहीं हैं तो वह सतलाक नहीं रहेगा। मैं ऐसा समझता हूं।

यह पांजी निरखो निज धामी, विमल दोप बैठे जहां स्वामी।

वह जो अवस्था है किसीने उसको पांजी कह दिया, किसी ने लोक कह दिया और किसी ने तबक कह दिया। किसीने उसको आसमान कह दिया। और किसी से सतलोक कह दिया। वहां जाने से सुरत को अपने घर का पता लगता है। हम सब सतलोक से आये हैं। यही गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज ने कहा है।

मैं हूं सतपुरुष का दासा, देखन आया जगत तमाशा।

हमारा असली रूप क्या है ? प्रकाश और शब्द और वही शब्द है राधास्वामी कोई उसको सत सत कहता है, कोई हक हक कहता है। वह हमारे अपने ही रूप का शब्द है। वह शब्द अटूट (unbreakable) है। वह घटता बढ़ता नहीं है वह शब्द एक रस है। उसमें एक ही लै होती है।

ऐ महात्माओं ! आपलोगों ने जीवों को सचाई नहीं बताई और उनका भ्रम में डालकर ग़लत ढंग से अपने पीछे लगाया है। इन बाणियों को पढ़कर लोग सारी आयु तुम्हारे पांव चाटते रहे। क्या मिला उनको ?

पोहप नगर जहां अमृत धाम, हंस बसें पावें विश्राम।

यह सारा खेल जीवन के बोध भानों का है। ये अवस्थायें हैं। पोहप है फूल। जिस प्रकार फूल में से सुगन्ध आती है वैसे ही वहां सुगन्ध आती है। मेरे साथ बीती हुई है मैं सुनाम स्टेशन पर था और अभ्यास किया करता था एक बार मेरा सिर इतना ठन्डा हो गया जैसे सिर पर बर्फ रखी हुई हो। बर्फ की ठन्डक तो चुभती है लेकिन वह बहुत आनन्द-दायक थी। तीन दिन तक यह दशा रही। कुछ दिन बाद हजूर दाता दयाल जी महाराज आये और मैंने उनसे सारा हाल बताया कि मेरे सिर की तीन दिन तक यह दशा रही। उन्होंने फरमाया कि फकीर ! मेरे अनुभव में यह बात नहीं आई। आप सोचो कि वह कितने सच्चे आदमी थे। मैं यह समझता हूं कि इस अवस्था में जो आदमी ज्यादा समय तक अभ्यास करता है वह शिघ्र मर जायेगा। मुझे भी उस अवस्था का अनुभव है जहां अभ्यासी के अन्तर से सगन्ध आती है। वह सुगन्ध क्या है और क्यों आती है ? मैं अपना अनुभव बताता हूं। तुम गुलाब की पत्तियों को पानी में डाल दो, कुछ दिनों के बाद पत्तियें गल जायेंगी लेकिन उस पानी में से सुगन्ध आयेगी। हमारे मस्तिष्क के दो भाग हैं। एक सफेद

और एक लाल। अभ्यास करते २ जब हमारी सुरत सफेद रंग के मस्तिष्क के भाग से ऊपर चली जाती है तो अनर्जी के न होने के कारण सफेद रंग की प्रकृति के भाग गलने और सड़ने लग जाते हैं। जान निकल जाने के बाद जब शरीर सड़ जाता है तो क्योंकि शरीर भारी वस्तु है इसलिए उसमें से बदबू आती है और मस्तिष्क का सफेद भाग क्योंकि हलकी से हलकी प्रकृति से बना हुआ है इसलिए जब उसके सूक्षम भाग सड़ने लगते हैं तो उनमें से सुगन्ध आती है।

सरदार सन्तसिंह के साथ भी ऐसा हुआ था। उसके अन्तर से उसे सुगन्ध आती थी। उसने मुझे लिखा। मैंने उसे तार दी कि अभ्यास बन्द करो और तुरन्त मेरे पास आओ। वह आया तो मैंने उसे असलियत समझाई कि अभ्यास मत करो अन्यथा मर जाओगे।

बैठक स्वामी अदभुती, राधा निरखनहार।
और न कोई लख सके, शोभा अगम अपार।
गुप्त रूप जहां धारिया, राधास्वामी नाम।
बिना मेहर नहिं पावई, जहां कोई विश्राम।

वह स्वामी है सार शब्द। जिसमें से हमारी सुरत बनी है। रचना में पहले गति होती है और फिर शब्द पैदा होता है। शब्द को सुनने की जो चेतनशक्ति है वह है सुरत। पहले सुरत नहीं थी। वह ज़ात में गुम थी। जब गति हुई तो शब्द पैदा हुआ और सुरत बन गई। फिर उसको अपने होने का बौध हुआ। जिसके भाग्य में है वह इस ओर आता है और यत्न करता है। जिसके भाग्य में नहीं है वह यत्न भी नहीं करता। यह कर्म की बात है और मेरा भी यह कर्म भोग है।

गुप्त रूप है ज़ात। जब हमारी यह दशा आ जाती है तो अंश कुल में लीन हो जाता है। तुम लोग आये हो, अभ्यासी हो, इसलिए मैंने यह सत्संग कराया है। भ्रम में न आना और बाणी जाल में मत फंसना।

बाणी जालम महा जालम।

वणियें भी सच्ची हैं। संसार को अकर्षण करने के लिए ये रोचक वाणियां बताई गई हैं।

सब को राधास्वामी।

सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर, होश्यारपुर।

दिनांक १८ जनवरी, १९७६

राधास्वामी। बुढ़ापा आगया। शरीर और मन बूढ़े हो रहें हैं और रुह भी बूढ़ी हो रही है। यह काम करता हूं। दुरागियां! तुम मेरे मित्र हो। मैं कई बार सोचा करता हूं कि क्या किया फकीर तुमने और क्या मिला तुमको? यह प्रश्न मेरे अन्तर कई बार पैदा होता है। मुझे बचपन से ही कोई तलाश थी। सन्तों की बाणियां पढ़ीं। इन बाणियों ने मुझे भ्रम में डाल दिया। मुझे सच्चाई की तलाश थी। जो सच्चाई मुझे मिली है वह कहती है कि फकीर! चुप कर जा। मगर अभी चरखा चलता रहता है।

कोई है रे हमरे गांव को, जा से परचा पूछौं ठांव को।

मेरे तो क्या सब के दिल में कोई न कोई इच्छा

है और किसी चीज़ की तलाश है। हम कुछ चाहते हैं, कोई धन चाहता है, कोई मान चाहता है, कोई स्त्री चाहता है, कोई मालिक को मिलना चाहता है और कोई यह जानना चाहता है कि हम हैं कौन और हमारा आदघर क्या है। मैं भी यही सोचा करता था रामायण ने बताया कि राम को मिलो। इसी खोज में आयु बीत गई। फिर गुरुमत में आया और गुरु को अन्तर में ढूंढता रहा। जीवन में मुझे यह खब्त रहा। मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। अनुभव ने जहां मुझे पहुंचाया है वह तो कहता है कि चुप कर जाओ। यह कर्म का चक्कर है। सांप का सिर तो कुचला गया है मगर उसकी दुम अभी तक बाकी है।

बिन बादल बरखै अखंड धार, बिन बिजुरी चमकै अति अपार
ससि भानु बिना जंह है प्रकाश, गुरु शब्द वहं कियो निवास
बृच्छ एक वहं अति अनूप, साखा पत्र न छांह धूप।
बिन फूलन भंवरा करि गुंजार, फल लागे वह निराधार॥

यह शब्द सुना, मैं मालिक को मिलने निकला था। सन्तों की बाणियों ने चकित किया हुआ था। मैं देखना चाहता था कि वह गांव असल में है भी या केवल कल्पना ही है और क्या सन्तों का मार्ग ठीक

भी हैं या जो आदमी अपने आदघर जाना चाहता है वह कैसे जायेगा और क्या उस गांव का पता देने वाला भी कोई है ? यह विचार हर समय मेरे मन में चक्कर लगाया करते थे ।

ऊंच नीच नहिं जाति पांति, त्रिगुण न व्यापे सदा शान्ति ।

हमारी आद अवस्था शान्ति है । वहां त्रिगुण जगत की कोई चीज़ नहीं है ।

हर्ष सोग नहिं राग दोष, जरा मरन नहिं बंध मोष ।
अखण्डपुरी इक नगर नाम, जहं वसें साध जन सहज धाम ॥
मरै न जीवै आवै न जावै, जन कबीर गुरु मिले धाय ॥

जब यह अवस्था आ जाती है तब वहां गुरु मिलता है । उस मंज़ल का मुझे पता तो लग गया मगर अभी तक मुझसे वहां ठहरा नहीं जाता । उस अवस्था का मुझे अनुभव कैसे हुआ और उस मालिक के रूप का मुझे पता कैसे लगा ? यह मुझे आप लोगों से पता लगा । जब मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है, उनको दवाईयें बता जाता है, उनकी सुरतें चढ़ा जाता है और कई प्रकार से उनकी सहायता कर जाता है लेकिन मैं नहीं होता और न मुझे कोई पता होता है, इससे मुझे विश्वास हो गया कि

यह सब माया है और मन का खेल है। मुझे यह सिद्ध हो गया कि मेरे अन्तर भी जो कुछ प्रकट होता है यह सब माया है। बस केवल इस एक विचार ने मुझे मंजल का पता दिया।

चार पांच दिन हुये एक आदमी ने चण्डीगढ़ से यहां तीन हज़ार रुपये का चैक भेजा। वह लिखता है कि मैं काबुल (अफगानिस्तान) एक कारखाना लगाने के सिलसिले में गया। आप वहां मेरे साथ थे। आपने मेरा बाजू पकड़ कर मुझे बड़े आदमियों की पंक्ति में खड़ा कर दिया और अब मेरा कारखाने का काम वहाँ मनज़ूर हो गया है। कुछ महीने पहले भी जब उसकी बहन का विवाह था तो उसने मुझे पत्र लिखा था कि आप इस विवाह में मेरे साथ रहे और हर एक काम में मेरी सहायता करते रहे। विवाह बहुत अच्छा हो गया। तीसरे दिन प्रातः आपने कहा कि मैं अब जाता हूं और आज ही ग्यारह रुपये मन्दिर को भेज दो। उस दिन मुझे दिल्ली जाना था। वहां पहुंचकर मुझे विचार आया कि मैंने रुपये नहीं भेजे जोकि आज ही भेजने थे।

डाकखाना का समय समाप्त हो चुका था तो फिर मैंने ११ रुपये का टी. एम. ओ. भेजा।

मैं जब यह कहता हूं कि आप सत्संगी लोग मेरे सत्गुरु हैं तो मैं झूठ नहीं कहता। मैं तो न उसकी बहन के विवाह पर गया और न अब गया। वह कहता है कि मैंने दिल्ली में अपना दफतर खोला हुआ है। मैं जब प्रतिदिन दफतर जाता हूं तो मुझ से पहले ही आप वहां मौजूद होते हैं। मैं वहां जाकर सबसे पहले आप को नमस्कार करता हूं और आप मुझे आशीर्वाद देते हैं। एक दिन आप ने मुझसे कहा कि मैंने मानवता मन्दिर में Free Eye Hospital खोला है। उसके लिए तुम ५००० रुपये भेजो। इसलिए मैं यह ३००० रुपये भेज रहा हूं और फिर थोड़े दिनों तक २००० रुपये और भेज दूंगा।

अब मैं अपने आप से पूछता हूं कि क्या तुमने उसको रुपये भेजने के लिए कहा ? नहीं। इसलिए मेरा संसार के महात्माओं और गुरुओं से अनुरोध है कि यदि मेरा अनुभव ठीक है तो वह लोगों को सच्चाई बतायें। और यदि नहीं को तो मेरा खण्डन करें। मेरा अनुभव सिद्ध करता है कि जिन गुरुओं

ने परदा रखकर अपने डेरे और गद्दियें बनाई है अपनी सम्पतियें बनाई हैं और वह डेरे गद्दियें और सम्पतियें अपनी संतान को दे दी हैं तो उन्होंने संसार में आकर क्या किया है? अपना कर्म और बढ़ाया है।

जिस व्यक्ति ने मुझे ये ३००० रुपये का चैक भेजा है उसको मैंने पत्र लिखा है वह सुनो :—

प्यारे के. एल. जैन, राधास्वामी

आपका ३००० रुपये का चैक आया वह वापिस किया गया है। आपने अपने पत्र में लिखा है कि जब आप काबुल (अफगानिस्तान) गये तो मेरा रूप आप के साथ रहा और वहां मैंने आपको बहुत बड़े आदमियों की पंक्ति में खड़ा कर दिया। आपने लिखा है है कि मेरे रूप ने आपको ५००० रुपये मानवता मन्दिर में भेजने को कहा है। जब आपकी बहन का विवाह था तो उस समय भी आपने लिखा था कि मेरा रूप विवाह के समय आपके साथ रहा और आपको हर समय काम के बारे कहता रहा और मेरे रूप ने आप से कहा कि आज ही मानवता मन्दिर में ११ रुपये भेज दो और आपने ११ रुपये का T-M.O. भेजा था।

--आप लोगों की दया से मैंने असलियत, हकीकत सच्चाई और शान्ति को प्राप्त किया है। देखो जैन साहिब ! इस फकीर चन्द ने जो होशियारपुर में रहता है तुमको न ग्यारह रुपये भेजने को कहा और न ही पांच हज़ार रुपये भेजने को कहा है। वह किसने कहा ? वह तेरा अपना ही आत्मा है। जिस प्रकार के विचार और संस्कार मानव के मस्तिष्क पर प्रारब्ध कर्मानुसार और कुछ देखने से, सुनने से, छूने से या किताबें पढ़ने से पढ़ते हैं वही शकलें बनाकर मानव के सामने आते हैं। तुमने गुरुमत को नहीं समझा। संसार की वासनाओं के अधीन और तुम्हारे विश्वास और श्रद्धा के कारण तुम्हारे मन के अन्तर यह सारा खेल होता है। मैं फकीर के रूप में और ब्राह्मण होने के नाते आपको या संसार को अज्ञान में रखकर लूटना नहीं चाहता। इसमें शक नहीं कि मेरे मन में यह इच्छा अवश्य रहती है कि मन्दिर का काम चलता रहे। क्योंकि तुम मेरा ध्यान करते हो और मेरे अन्तर यह वासना है कि मन्दिर की कोई सहायता करता रहे। इसलिये हो सकता है कि मेरी वासना का संस्कार तुम्हारे मस्तिष्क पर पड़ा हो।

मैंने तुमको कभी यह नहीं लिखा कि तुम मन्दिर में रुपये भेजो। इसलिए यदि खुशी से और परोपकार के विचार से तुम यह रुपया मानवता मन्दिर में देना चाहते हो तो दे दो अन्यथा यदि आप इस विचार से मुझे यह ५००० रुपये देते हो कि मैंने आप से कहा है कि रुपया भेजो तो क्योंकि मैंने नहीं कहा इसलिए मैं यह रुपया नहीं लंगा।

जो कुछ मेरे पास है उसको तो कोई लेना नहीं चाहता। मेरे पास है अनुभव, ज्ञान और सार भेद ताकि जीव काल और माया के चक्कर से निकल जाएं और उनको असलियत हकीकत और सच्चाई मिल जाये। मैंने यह मानवता मन्दिर बनाया। क्यों? यह जितने मत मतान्तर और धर्म हैं ये सारे के सारे जीव को इस मन के चक्कर में ही रखते हैं। क्योंकि हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे जिम्मे निबल अबल और अज्ञानी जोवों की सहायता का काम लगाया था तो मैंने सार भेद बताने के लिए यह काम किया है। दोस्त ! 'सत्गुरु' नाम है सतज्ञान का और तुम्हारी श्रद्धा और विश्वास का। तुम बहुत भाग्य-शाली व्यक्ति हो। तुम्हारा विश्वास और तुम्हारी

श्रद्धा काम करती है। मैं संसार की आंखों में मिट्टी डालकर अपना उल्लू सीधा करना नहीं चाहता। मन्दिर में पैसे की मुझे भी आवश्यकता है मगर मैं सच्चाई से काम करना चाहता हूं। यदि मैं यह सच्ची बात तुमको नहीं बताता तो आपका यह पांच हज़ार रुपया मेरी जान को भी खा जायेगा और मानवता मन्दिर को भी खा जायेगा।

आप का
(Sd.) FAQIR

अब आप सोचो कि जब मैं यह कहता हूं कि आप लोग मेरे सच्चे सतगुर हो तो क्या मैं झूठ कहता हूं ? हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने १९१८ में मुझे फरमाया था कि फकीर ! तुझमें ९९ दोष हो सकते हैं मगर एक सच्चाई है जो तुमको पार ले जायेगी। मेरी आज्ञा मानो तुमको सच्चे सतगुरु के दर्शन सत्संगियों के रूप में होंगे। तो मुझे आप लोगों की दया से उस गांव का पता लग गया जिसका वर्णन कबीर साहिब ने अपने शब्द में किया है। लोगों के अन्तर मेरा रूप प्रकट होता है और उनके अनेक काम करता है लेकिन में किसी के अन्तर नहीं जाता

कौन जाता है ? पहली बात तो यह है कि तुम्हारे भाव, तुम्हारे विश्वास और तुम्हारी श्रद्धा के कारण यह सारा खेल होता है। दूसरे जिसका तुम ध्यान करते हो यदि उसके साथ तुम्हारा प्रेम सच्चा है तो उसके अन्तर जो भाव हैं वे तुम्हारे मस्तिष्क पर प्रभाव डालेंगे। जो आदमी गुरु बनके लोगों को नाम दान देते हैं और अपना ध्यान बताते हैं और साथ ही हेरा फेरी करते हैं और लोगों को अज्ञान में रखकर धन इकट्ठा करते हैं। उनके उन बिचारों का प्रभाव और संस्कार उनका ध्यान करने वालों में जायेगा क्योंकि Law of Radiation काम करता है। इसलिए ऐ गुरु बनने वालो ! तुमको एक फकीर जो संसार में समय के सन्त सतगुरु के रूप में प्रकट हुआ है वह कहता है कि यदि तुम गुरु बने हुये हो तो अपनी नीयत को साफ रखो। क्योंकि जैसी तुम्हारी नीयत होगी वैसा ही प्रभाव तुम्हारा ध्यान करने वालों पर पढ़ेगा।

लोग मेरा ध्यान करते हैं। उनके पत्र आते हैं। बाबा जी आपका रूप प्रकट हुआ। यह कर दिया वह कर दिया। क्या मैं करने जाता हूं ? नहीं। मेरे

अन्तर यह जज्बा है कि दूसरों का भला हो, उनको सेहत मिले, रोटी मिले, कपड़ा मिले, रहने को मकान और उनके मन को शान्ति मिले। मैं यह कभी नहीं कहता कि उनको मालिक मिले या उनको मुक्ति मिले। मैं तो कुछ करता नहीं, लोगो के विश्वास, श्रद्धा और ध्यान शक्ति के कारण उनके काम होते हैं। यह है भेद जो मैं लोगों को बताना चाहता हूं। क्योंकि मेरे ज़िम्मे यह कर्तव्य था और मैंने यह काम करना था इसलिए सच्चाई वर्णन कर रहा हूं। मैं कुछ नहीं देता। जिसका तुम ध्यान करोगे उसके भाव तुम्हारे मस्तिष्क पर प्रभावित होंगे। इसलिए मैं कहता हूं कि तुम जिसको पूजते हो और जिसका ध्यान करते हो उसको किसी डेरे का मालिक या होश्यिारपुर में रहने वाला मत समझो। उसको पूर्ण मानो। इसलिए शास्त्र कहते हैं।

गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु, गुरुदेव महेश्वरः।
गुरु साक्षात पर ब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नमः॥

जो आदमी गुरु को पूर्ण मानकर ध्यान करता है उसको मुक्ति हो सकती है और वह लक्ष्यपद को प्राप्त कर सकता है। दूसरा नहीं पहुंच सकता। यह बिलकुल सच्ची बात है।

कोई है रे हमरे गांव को, जा से परचा पूछौं ठांव को ।।

मेंने अपने आपको समय का सन्त सत्गुरु कहा है। उस गांव का मुझे पता तो लग गया है मगर मुझे अभी तक उस गांव में स्थाई ठहराओ नहीं मिला । यह मालिक की मौज है। वह गुरु क्या परिचय देता है ? कि ऐ मानव ! जो कुछ तुम सोचते हो और ये जितनी शकलें तुम अपने अन्तर में बनाते हो और जब तक तुम इन शकलों को सत मानते रहोगे तुम अपने गांव में नहीं जा सकते। जब तक सुरत इन विचारों में खेलती है वह अपने गांव में या इस मंज़ल पर नहीं पहुंच सकती क्योंकि हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए मैं सच्चाई वर्णन कर रहा हूं मगर मुझे यह कोई दावा नहीं है कि जो मेरा अनुभव है यही ठींक है। हो सकता है कि मेरा अनुभव ग़लत हो, मगर मेरी नीयत बिलकुल साफ़ है। आदमी के अन्तर में जितनी शकलें बनती हैं । यह सब माया है और सूक्ष्म प्रकृति है। जब तक किसी को यह निश्चय नहीं होता कि ये शकलें जो अन्तर में बनती हैं यह सब माया हैं वह अपने घर नहीं जा सकता। यदि मरते समय राम,

कृष्ण, कोई देवता या देवी, बाबा फकीर या किसी और गुरु का रूप आ जायेगा तो वह आदमी अपने घर नहीं जा सकता। इसलिए जो मेरे मिलने वाले हैं, सेठ दुर्गा दास या जिन्होंने मेरी या मानवता मंदिर की सेवा की है उनको सच्चाई बता रहा हूं। यह जो प्रोपेगेण्डा किया जा रहा है कि नाम ले लो अन्त समय पर तुमको गुरु ले जायेगा। यह सब धोखा है। हजूर राय सालिग राम साहिब जी महाराज ने भी यही बात अपनी प्रेम बाणी में लिखी है कि अन्त समय पर फिल्म चलती है। जिस गुरु से नाम लिया हुआ होता है। वह गुरु भी आ जाता है और शब्द भी सुना देता है। फिर कुछ समय ऊपर के लोकों में उसका सूक्ष्म शरीर रहता है। वहां सत्संग भी मिलता रहता है। फिर जब कोई सन्त सत्गुरु इस संसार में आता है तो वह जीव भी जन्म लेकर और उसके सम्पर्क में रहकर अपनी बाकी की कमाई पूरी करके अपने निजघर पहुंच जाता है। बाकी की कमाई क्या है? बाकी की कमाई यह ज्ञान है कि ऐ मानव! तेरे अन्तर में जितने विचार भाव और शकलें पैदा होती हैं यह सब माया है। अभी आपको पत्र पढ़कर

सुनाया है, मैं तो गया नहीं वह जो बाबा फकी उसके साथ रहा वह सब माया थी और उस आदमी के मन की कल्पना थी। मन के रंग रूप सब माया है। मैं अभी तक भी कई बार इस माया में फंस जाता हूं। कई वार तो स्वप्न में मुझे यह पता होता है और कभी नहीं भी होता। मेरे स्वप्न में रेल और तार आ जाती है। मैं डरता हूं कि यदि अन्त समय में मैं स्वप्न में चला गया या कोई रंगरूप सामने आ गया तो यदि यह गुरु ज्ञान याद न रहा तो मेरा क्या परिणाम होगा। यदि अन्त समय पर गुरु, राम या इष्ट आ जाये तो वह फिर भी अच्छा है क्योंकि उसको कोई अच्छा चोला तो मिलेगा। तो मैं उस गांव का आपको पता दे रहा हूं।

कोइ है रे हमरे गांव को, जा से परचा पूछौं ठांव को।
बिन वादर वरखै अखण्ड धार, बिन विजुरी चमकै अति अपार ॥

इन बाणियों की समझ नहीं आती थी। मैं वह बादल देखना चाहता था। बादल तो है नहीं और न ही वहां पानी बरसता है। यह बात अलंकार में कही गई है। भाव यह है कि वहां ठण्डक है और

शान्ति है। हमारा Self जब मन के चक्कर से निकल जाता है तो उसको शान्ति मिल जाती है। यदि आज कबीर साहिब होते तो मैं उनसे पूछता कि आपका इससे क्या भाव है। वहां बादल तो है नहीं। दूसरा कोई महात्मा सच्ची बात बताता नहीं।

ससि भानु बिना जहं ह्वै प्रकाश, गुरु शब्द तहं कियो निवास

सूर्य चान्द तो वहां हैं नहीं मगर वहां रोशनी है। कई आदमी अपने अन्तर सूर्य चान्द और सितारे देखते हैं। मैं भी देखा करता था। वह सब माया देश का दृश्य है। चार पांच दिन हुये कि मैंने स्वप्न में बहुत बड़ा चान्द देखा। वह क्या था ? वह अवस्था लक्षपद नहीं है। जहां सूर्य चान्द नहीं मगर अनुभव की रोशनी है वह है लक्षपद। काल और माया का नूर लक्षपद नहीं है। असल नूर क्या है ? हज़ूर दाता दयाल जी महाराज का शब्द सुनो।

घट में नूर प्रकाशया, बरस गया चहों ओर।
जगमग जगमग हो रहा, बढ़ा नूर का ज़ोर।
नूर नूर सब कोई कहे, नूर न जाने कोय।
गुरु गम परख का ज्ञान जो, नूर कहावे सोय॥

यह मेरे निजी अनुभव की पुष्टि है। तुम्हारे अन्तर सूर्य सितार चमकते हैं। धन्य हैं मगर यह

मार्ग की मंज़लें हैं और काल और माया है। वह असली नूर नहीं है। असली नूर अनुभव है। आप लोगों की दया से मुझे यह समझ आई। लोगों के पत्र आते हैं कि बाबा जी ! आप नूर में या चांद मैं बैठे हुये दिखाई देते थे। क्योंकि में नहीं होता । इसलिए मैं भी जो नूर में या चान्द में बैठा दिखाई दिया, कल्पित था और वह नूर भी कल्पित था। देखो हज़ूर दाता दयाल जी महाराज क्या लिख गये। किसने उनका मान किया ? यह है अनुभव और यही सन्तमत है जो मैं बता रहा हूं ।

आद अन्त यह नूर है, छाय रहा भरपूर।
जो न लखे इस नूर को, तिस आंखन में धूर।

वह नूर क्या है ? तुम्हारे अपने Self या हैपने का ज्ञान है। जब हमारा Self सब प्रकार की वस्तुओं को छोड़कर जुदा हो जाता है तब यह ज्ञान या नूर प्राप्त होता है। जब तक इस नूर को कोई देखता रहेगा अपने घर नहीं पहुंच हकता।

घट में प्रेम परगट भया, आंसू निकले नैन।
धो गये छिन में आंख दोऊ, अब लख नूर का सैन।

इस असली नूर को कौन देखता है ? जिसके अन्तर अपने आद घर जाने की विरह है। जिसको

यह सच्ची लगन है कि मेरा आद क्या है। मेरे अन्तर थी। जब विरह समाप्त हो जाती है तो फिर गुरु का पता लगता है :

राधास्वामी रूप में दरस नूर का पाय।
तिमर मिटा अज्ञान का सतगुरु भये सहाय।

बाहर के गुरु के रूप में उसका दर्शन होता है। जीव के भ्रम वहम शंकायें और प्रश्नोंत्तर को समाप्त करने या दूर करने का बाहर के गुरु का कर्तव्य है। मुझे हजूर दाता दयाल जी महाराज ने कहा था कि तुमको सच्चे सतगुरु के दर्शन सत्संगियों के रूप में होंगे। वह रूप क्या है ? ज्ञान, समझ और विवेक और यह आप लोगों से मुझे मिला। मुझे नूर का पता लग गया और मेरा जोवन बदल गया। मगर अभी तक मुझसे उस अवस्था में ठहरा नहीं जाता। मैं वहां रहना चाहता हूं मगर यह मेरे वश में नहीं। इसलिए मैं कहा करता हूं कि :-

जिस पर दया आद कर्ता की बह यह नहमत पावे।
यह मालिक की मौज है हमारे वश में नहीं।
कोई है रे हमरे गांव को, जा से परचा पूछौं ठांव को।

वह हमारा ठांव क्या है ? Supermost Conciousness ऊंचे से ऊंची अवस्था। हमारा चेतनपना। वह है हमारा देश जहां से कि हम आये हैं। मैं कभी ये वाणियें पढ़ा करता था कि हम जन्म जन्मान्तर से धक्के खा रहे हैं। इस बात को बुद्धि मानती है। कैसे ? हमारा यह शरीर कहीं से आया है। इसको बनाने वाले Vitamins and Minerals हैं। यदि यह हमारा शरीर अन्न से भी बना फिर भी तो Vitamins and Minerals से बना। मन कैसे बना ? जिस प्रकार के ग्रह पड़े हुये होते हैं उनके प्रभावों के अनुसार मन बनता है और उसी प्रकार के विचार पैदा होते हैं। जिसके नीचे ग्रह पड़े हुये होते हैं वह सदा बुरी बात ही सोचेगा। तुम लाख यत्न करो वह बुरी आदत को छोड़ नहीं सकता। हमारे मन के भाव और विचार उन ग्रहों से आते हैं। प्रकाश भी प्रकाश के मण्डल से आता है। जो वस्तु हमारे अन्तर में प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है। वह भी कहीं से आई हुई है और वह हम हैं। पता नहीं वह कहां २ ठहरती हुई यहां आई है और न ही यह पता है कि हम कबसे अपने घर से

बिछड़े हुये हैं। पहले शब्द में आये, फिर प्रकाश में आये, फिर मन में और फिर शरीर में आये। जब हम यहां दुखी हो जाते हैं तो फिर कोई वहां का रहनेवाला ही इस संसार में आकर उसे समझाता है कि भाई ! यह तेरा देश नहीं है। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने एक शब्द में मुझे फरमाया था।

यह तो नहीं तेरा देश, देश है बेगाना।
यहां सब बेगाने बसें, कोई न यगाना।

उस समय मुझे समझ नहीं आती थी। पता नहीं हम कब से चले हुये हैं। तुम लोग मेरे पास आते हो, कोई किसी काम के लिए आता है और कोई किसी काम के लिए आता है। जिसके भाग्य में होता है वह इस ओर आता है।

बिन बादर बरखै अखंड धार, बिन बिजुरी चमकै अति अपार।
ससि भानु बिना जहं ह्वै प्रकाश, गुरु सबद वहं कियो निवास।

यह हमारे Self की अवस्था है। सूर्य चान्द सितारे सब काल और माया के चक्कर में हैं। वहां गुरु का शब्द निवास करता है। वह शब्द निज नाम है। वही राधास्वामी है और वह तुम्हारा

अपना ही रूप है। तुमने मन को इकट्ठा करना है। मैं नहीं कहता कि तुम राधास्वामी नाम जपो। जिस नाम से तुम्हारा दिल चाहे मन को इकट्ठा करो।

नाम रहे चौथे पद माहीं। ये ढूडे तरलोकी माहीं।

शरीर में रहते हुये हम जो भी नाम जपते हैं चाहे वह राधास्वामी नाम है चाहे वह राम राम है या अल्ला है, सोहगं है या कोई और नाम है, ये सब वर्णात्मिक नाम हैं। इनसे तुम्हारा मन इकट्ठा हो जायेगा। सुमिरन शरीर की अशान्ति को दूर करता है। ध्यान मन की फुरनाओं को रोकता है, प्रकाश आत्मा को और शब्द सुरत को कंट्रोल करता है और सुख देता है। ये मेरे अनुभव की बातें हैं। जब मेरे शरीर में बेचैनी होती है तो उस समय मैं यदि शब्द सुनूं तो शारीरिक बेचैनी दूर नहीं होती। यह सुमिरन से दूर होती है। सुमिरन ऐसे करो जैसे नमदे में सुये को चुभो दिया जाता है। ऐसे अजपा जाप से शारीरिक कष्ट दूर होता है। ये बातें मेरे अनुभव में आई हैं। एक सिवल सरजन बहुत अशान्त था वह मेरे पास आया मैंने सोचा कि यदि इसको राधास्वामी का मैं सुमिरन बताऊंगा तो इसको

विश्वास नहीं आयेगा। मैंने उससे कहा कि एक से लेकर १०० तक गिनो और फिर सौ से नीचे की ओर एक तक गिनो और कम से कम ४०-५० बार प्रतिदिन ऐसा करो। इससे तुमको शान्ति मिलेगी। थोड़े दिनों के बाद उसने बताया कि मुझे काफी लाभ हुआ है। जो आदमी राम राम अल्ला अल्ला या किसी और नाम का सुमिरन भी किये जाते हैं और अपना काम भी करते जाते हैं। उनका वह सुमिरन नहीं है। उनका ध्यान तो काम में होता है सुमिरन में नहीं होता। इसलिए उनको एकाग्रता नहीं होती। ऐसा सुमिरन व्यर्थ हैं। यदि चेतन होके सुमिरन करो तो पदरह: मिण्ट का सुमिरन ही तुमको शान्ति दे देगा। ऐसे हो ध्यान का हाल है। मगर विचार आते ही रहते हैं। ध्यान के समय गुरु की आंख और मस्तिक को देखो। इससे मन ठहर जायेगा। यह तुम लोगों को नुकते बता रहा हूं। यह मंजल बहुत सरल है शर्त यह कि कोई गुरु मिल जाये। पैसे का लेना और देना संसार का व्यवहार है।

वृच्छ एक वहं अति अनूप, साखा पत्र न छाहं धूप।

हमारी जो हस्ती है वह फैली हुई है। हमारे की धारें उसके फूल पते और शाखायें हैं। वह वृक्ष तुम हो। जब नीचे आते हो तो विचार पैदा हो जाते हैं। हमारा जो आद घर है, जब हम वहाँ होते है तो हमारे फूल पते और शाखायें अर्थात विचार नहीं होते।

बिन फूलन भंवरा करि गुंजार, फल लागे तहं निराधार।

भंवरा तुरत है। भंवरा तो फूलो में मस्त होता है लेकिन सुरत वहां अपने आपमें ही मस्त रहतो है। सन्त की बाणी को सन्त ही समझ सकता है। आज कल ये सत्संग कराने वाले बाणियों को ही दोहराते रहते हैं अर्थ की इनको समझ नहीं।

ऊंच नीच नहिं जाति पांती, त्रिगुन न व्यापै सदा सांति।

शान्ति हमारे अपने ही रूप में है। हम स्वयं शान्त स्वरुप और शुद्ध रूप हैं। कबीर साहिब का इससे क्या भाव है यह मुझे पता नहीं। मैंने जो समझा है वह बता रहा हूं। मेरा जीवन सचाई से बीता है। मगर अभी तक भी मैं गिरता रहता हूं। यह अपने वश की बात नहीं। नथ खसम दे हथ।

हर्ष सोग नहिं राग दोष, जरा मरन नहिं बंध मोष।

जब हम अकेले हो जाते हैं तो फिर हर्ष शोक या जन्म मरन का विचार तक भी नहीं होता। वह जो हमारी अवस्था है वह Condition of condition-lessness है। वह हमारी अपनी ही ज़ात है। इस पर शब्द प्रकाश मन और शरीर के खौल चढ़े हुये हैं। सहसदल कमल का खौल, त्रिकुटि का खौल, सुन्न महासुन्न का खौल और भंवर गुफा के गिलाफ चढ़े हुये हैं। हमारा देश इन सबसे परे है।

अखंडपुरी इक नग्र नाम, जहं बसै साध जन सहज धाम।

वह अखंड अर्थात न टूटने वाली पुरी है। मैं कहा करता हूं कि वहां का शब्द टूटता नहीं है। वह अखंड है। घण्टा, शंख, बम २, रारंग सारंग, मुरली और बीन में लै होती है लेकिन उस शब्द में लै नहीं होती। यह मेरा कर्म भोग है जो मैं यह काम करता हूं। यह मेरे जीवन का अनुभव है। यदि ग़लत है तो पता नहीं और मेरा क्या परिणाम होगा यह भी पता नहीं।

मरै न जीवै आवे न जाय, जन कबीर गुरु मिले धाय।

जिसको गुरु मिल जाता है वह आदमी वहां पहुंच सकता है। गुरु नाम है समझ विवेक और ज्ञान

का। मेरा यह सत्संग का जो काम है यह मेरा कर्म भोग है। किसी पर कोई उपकार नहीं। जज्बा था, इसलिए सन्तमत में आया। हजूर दाता दयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन किया और जो अनुभव किया वह कहा। प्रारम्भ में जब इन बाणियों को पढ़ता था तो सोचा करता था कि मैं कहां फंस गया जहां मेरे पूर्वजो का खण्डन किया हुआ है। बाणी की समझ नहीं आती थी और हजूर दाता दयाल जी महाराज पर मेरा विश्वास भी नहीं टूटता था। इसलिए तलाश में जीवन व्यतीत हुआ।

मन रंघी खेलै धमार, तीन लोक में सार।
काहू को पाताल पठाता, काहू को आकाश।
काहू को बैकुंठ देतु है, फिरि मृत लोक की आस।
सुर नर मुनि सबही को छलिया, काम क्रोध के संग।
अंतर और कहै कछु और, करत सबन मन भंग।

यह हमारे मन की दशा है। कभी यह सुरत को नीचे ले आता है और कभी ऊपर ले जाता है और चक्कर में ही रखता है।

निसी बासर ममता उपजावत, बाजी देत भुलाई।
चौराची पिचुकारी मारत, जनम जनम भरमाई।

षट दरशन पाखण्ड छानबे, भर्म परयो संसार।
बेद पुराण सबै मिली गावत, करमलगाय लार।

मन हमको कभी कहीं ले जाता है और कभी कहीं ले जाता है। किसी न किसी चक्कर में ही रखता है और पार नहीं जाने देता। वेद शास्त्र सब मन की माया है।

ज्ञानी गुनी चतुर कवि बांधे, माया रसरी डारी।
पछा पछी खेलत सब कोऊ, डारे पकरि पछार।

ज्ञान भी मन से होता है और ध्यान भी मन से होता है। मैं सोचा करता था कि मैं तो मालिक को मिलने निकला था। कहां फंस गया। इसलिए प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। शायद हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे कर्म काटने के लिए ही मुझे यह काम दिया हो। ये धर्म कर्म वाले सब मन का खेल खेल रहे हैं।

आंधर करि राखे सबहिन को, नैंनन डारि अबीर।
काल कुटिल जो छलबल मारे, नेक न वा को पीर।
खेलि न जानै खेलै निसी दिन, सुधि बुधि गई हिराय।
जिभ्या के लंपट नर भोदु, मानुष जनम गंवाय।

यह मन सबको चक्कर में डालकर खेल खेलता है। वह खेल क्या है? यह जानते हुए और ज्ञान

रखते हुए कि यह माया है खेल खेलो मगर इसमें फंसो नहीं। मैं मंदिर में और मंदिर के लिए सारे काम करता हूं। यह दुर्गादास मेरा पुराना मित्र है और मेरी सेवा करता है। लेकिन न मंदिर, न दुर्गादास और न ही कोई और मेरे स्वप्न में कभी आया है। लेकिन रेल और तार अभी तक भी मेरा पीछा नहीं छोड़ते। क्यों? क्योंकि रेल और तार विभाग में मैंने अपने स्वार्थ के लिए नौकरी की। मगर यहां मेरा कोई स्वार्थ या निजी काम नहीं है। मैं यह खेल खेलता हूं लेकिन इसमें फंसता नहीं। जो काम हम अपने स्वार्थ के लिए करते हैं उसका संस्कार मस्तिष्क पर रहता है। जीवन में कर्म तो अवश्य करना ही पड़ता है। इसलिए कर्म करो मगर उसमें फंसो नहीं। गीता का भी यही उपदेश है कि कर्म करते हुए अकर्मक रहो। अपने निजी स्वार्थ के लिए मत करो।

चीन्हो रे नर प्राणी या की, निसी दिन करत अंदोर।
होंई साह सबको घर मूसत तीनि लोक को चोर।

वह कहते हैं कि ऐ प्राणी! उससे सावधान हो के रहो जो तुमको रात दिन भरमाता रहता है

अर्थात मन के रूप को समझो। मैं तो इस परिणाम पर आया हूं कि जब प्रकाश रूपी आत्मा शरीर में आता है तो जिस प्रकृति से या ग्रहों से या जिस Quantity & Quality से हमारा शरीर बना हुआ है उस प्रकृति के अनुसार हम काम करने के लिए विवश हैं। हमारे वश की बात नहीं है। यदि आदमी को यह ज्ञान हो जाये वि मैं कौन हूं तो फिर ऊंचा जा सकता है। मेरे अन्तर भी ग्रहों के अनुसार संस्कार पैदा होते हैं मगर क्योंकि मुझे ज्ञान है कि यह सब मन का खेल है इसलिए उनका मेरी सुरत पर कोई प्रभाव नहीं होता। इसीलिए तो कहा गया है।

कामी तरे क्रोधी तरे पापी तेरे अनन्त।
आन उपासक कृतघन तेरे न नाम रटन्त।

एक आदमी चाहे कितना ही कामी या क्रोधी है यदि उसको समझ आ गई है तो उसकी मुक्ति हो सकती है, लेकिन जो दूसरे को पूजता है वह नहीं तर सकता। जो आदमी बाबे फकीर को पूजता है वह गैर को पूजता है। इन गुरुओं ने अपने मान प्रतिष्ठा और धन के लिए लोगों को अज्ञान में रखकर अपने

जाल में फंसाया हुआ है और कोई सच्ची बात नहीं बताता। उन्होंने तो अपने प्रोपेगेण्डे के लिए चेले रखे हुये हैं। यह सचाई है और मैं सचाई बता रहा हूं। मैं जानता हूं कि मेरी यह सचाई मानवता मंदिर की जड़ों पर कुलहाड़ी मारने के समान है। कौन देगा मुझे इस सचाई को सुनकर मगर मैं इस बात की परवाह नहीं करता। यदि कोई यह समझता है कि मेरे इस स्पष्ट वर्णन और सचाई से लोगों का भला हो सकता है तो वह जो चाहे मंदिर की सहायता करे।

सतगुरु सबद सत्त गहि निज करि, जा तें संसय जाई।
आवागवन रहित है तेरो, कहै कबीर समुझाय।

सत्गुरु के बचन को पकड़ो। सुरत शब्द योग दो प्रकार का होता है। यह जो कुछ मैं बोल रहा हूं यह मेरा शब्द है और तुम सुन रहे हो। यह बाहर का सुरत शब्द योग है। ऐसे ही अन्तर में जो शब्द होता है और तुम उसको सुनते हो। यह अन्तर का सुरत-शब्द-योग है। इसके लिए पूरे गुरू कि आवश्यकता है। पूरा गुरु है पूरी समझ जहां से भी मिल जाये ले लो और जिससे यह समझ मिली है उसकी दिल से सेवा करो। यह तो है परमार्थ।

तुमलोग आए हो संसारिक विचार से, तुम भी खाली न जाओ। सुनो ! जो कुछ किसीको मिला वह उसको उसके अपने ही कर्म और अपनी ही वासना का फल मिला। इसलिये जो कुछ तुम चाहते हो उस की प्रबल इच्छा रखो फिर जब तुम साधन करोगे तो तुम्हारी वह इच्छा पूरी हो जायेगी। जिस प्रकार की वासना तुम्हारे अन्तर में मौजूद है वह अभ्यास करने से बढ़ जायेगी। क्योंकि लोगों की वासनायें ठीक नहीं इसलिए मैं किसीको नाम नहीं देता और केवल सत्संग कराता हूं ताकि लोगों को बासना ठीक रखने की समझ आ जाये। यह नाम कई बार बजाय लाभ के हानि भी कर जाता है। अभ्यास की पहली सटेज में इच्छा पूरी हो जाने लग जाती है और रिद्धि-सिद्धि भी आ जाती है लेकिन यदि विचार ठीक नहीं तो नाम से हानि हो जायेगी। इसलिए सत्संग की महिमा है। हज़ूर महाराज जो ने लिखा है कि जिस प्रकार लोग डाक्टर से दवाई ले लेते हैं लेकिन परहेज़ नहीं करते तो बजाय लाभ के उल्टी उनकी उस दवाई से हानि हो जाती है ऐसे ही जो आदमी नाम तो ले लेते हैं मेकिन उनको सत्संग मिला हुआ नहीं है तो

नाम से उनकी हानि हो जाती है। इसलिए सबसे पहले सत्संग करो और फिर सुमरिन और ध्यान करो। जो आदमी सुमिरन और ध्यान को तो पहले पक्का नहीं करता और शब्द सुनना आरम्भ कर देता है उसकी दशा अच्छी नहीं रहती। शरीर को सुखी रखने के लिए सुमिरन है, मन को कंट्रोल करने के लिए ध्यान है, आत्मा आनन्द के लिए प्रकाश है और सुरत की शान्ति के लिए शब्द है। इसलिए सबसे पहले यह सीखो कि तुमने किस प्रकार के विचार रखने हैं और कैसे सोचना है। उसके बाद नाम जपो। जिसका आधार ही ठीक नहीं वह मकान कब तक रहेगा। इसलिए अपनी वासना को ठीक रखो। प्रालब्ध कर्म सब को भोगने पड़ते हैं। इनसे न सन्त और न अवतार कोई भी बच नहीं सकता। इसको कर्म भोग समझकर खुश रहने का यत्न किया करो।

सब को राधास्वामी

पत्र व्यवहार द्वारा ज्ञान

पत्र नं १

रणजीतसिंह ! राधास्वामी

तुम्हारे भाई का पत्र आया, जिसमें तुम्हारे सत्संग कराने, मेरे रूप के प्रकट होने, मेरे जैसी आवाज़ बोलने और अनुभव को वर्णन करने का लिखा है और साथ ही कोई पागल बाबा और भाई नन्दूसिंह जी की (Readiation) रेडियेशन तेरे अन्तर आती है और इन दोनों के बारे जो तुम लिखते हो उनसे तुम्हारे घरवाले चिन्तित हैं कि तुम पागल न हो जाओ। इसलिए मैं तुमको कहता हूं कि कुछ दिनों मेरा सत्संग करो। यह जितना तुम्हारा खेल है माया का है। तुम गृहस्थी हो, विवाहित भी हो। मैं नहीं चाहता कि तुम्हारा गृहस्थ या संसारिक जीवन बिगड़ जाये। इसलिए तुमको हिदायत करता हूं कि रूप का ध्यान छोड़ दो। असली व सच्चा सत्गुरु तो ज्ञान है, अनुभव है। उसको प्राप्त करने

के लिए गुरु का रूप शब्द है और उसके चरण प्रकाश हैं। तुम अपने अंतर प्रकाश का साधन किया करो और रूप का साधन बिल्कुल छोड़ दो और फिर हिदायत करता हूं कि कुछ दिनों मेरे साथ रहकर मेरी संगत करो।

अपने साधन का पूरा हाल लिखकर भेजो। रणजीतसिंह ! माया देश के चक्कर का अनुभव तुमने कर लिया, अब अपने अंतर प्रकाश तथा शब्द का अनुभव करो ताकि तुम ब्रह्म और शब्दब्रह्म के रूप हो जाओ और तुमको आत्मिक अवस्था और शान्ति प्राप्त हो। जो आदमी रूप का ही ध्यान करता है और उसे (फकीर चन्द) समझाता है वह मन के के मण्डल से ऊपर नहीं गया।

आपका

फकीर

पत्र नं० २

ऐ हौज़री के बनाने वाले और Exporter ,
राधास्वामी । तूने जो कुछ लिखा वह सच लिखा ।

नर भोगें बारम्बार अवश्य फल करम किये का ।

जिन हालात में तुम हो, यह शब्द अभ्यास तुमको लाभ नहीं देगा जब तक कि तुमको उस संसार जो कि तुमने बनाया हुआ है, के रूप को नहीं समझोगे । हर एक जोव अपने २ कर्म विश्वास और श्रद्धा का फल लेता है । न कोई देवी न कोई देवता और न कोई गुरु कुछ सहायता कर सकता है । जैसे कि लोग समझते हैं कि कोई देवी देवता फूंक मार देगा । विचार की दृष्टि से तुम उलझनों से निकल सकते हो ।

अभ्यास में शब्द सुनने की बजाय अपने मन को एक जगह एकाग्र किया करो । जब तक मन के ठहरने का साधन नहीं है तब तक शब्दयोग से शान्ति नहीं मिलती । शब्दयोग से केवल सुरत को शान्ति मिलती है, मन को शान्ति नहीं मिल सकती । मन को शान्ति के लिए सबसे पहले अकारण वैराग्य होना चाहिए कि संसार क्या है । एक खेल है और कर्म का चक्कर

है। जबतक यह निश्चय नहीं आता, मन अंतर में ठहर ही नहीं सकता। इस वास्ते किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग की महिमा है ताकि जीव को कुछ समझ और बिवेक आ जाये। यह शब्दयोग का मार्ग केवल उनके लिए है।

विषयों से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन संतान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे।

साधारण संसार बालों के लिए यह है कि नेको करो, परोपकार करो, दुखियों की सहायता करो, हक्क हलाल की कमाई करो, अपने धर्म और अपने कर्तव्य को पूरा करो और उस मालिक पर विश्वास रखो।

दोस्त! मेरे पास शुभ भावनायें हैं। सच्चे दिल से चाहता हूं कि तुमको स्वस्थ्य, धन और मन को शान्ति मिले। साधन जैसे मैंने कहा है वैसे करने का यत्न करो। पहले मन को सुमिरन से एकाग्र करो और फिर ध्यान योग से। ध्यान मे केवल गुरु के मस्तिष्क और आंखों को देखा करो। अंतर में बातें मत किया करो और गुनावन न उठाया करो।

आपका
फकीर

क्या सर्वाधार इस संसार में है

लेखक :-सेठ दुर्गादास साहिब, चण्डीगढ़

प्रोफैसर-ख्वाजा-दिल मुहम्मद एम-ए लाहौर ने गीता का अनुवाद उर्दू में किया है। जोकि बिलकुल ठीक है। इसके अनुवाद की पुष्टि बड़े २ पण्डितों ने की है। डाक्टर गौरीशंकर एम-ऐ-पी-एच-डी प्रोफैसर संसकृत गवर्नमेंट कालज लाहौर ने भी इस बात की पुष्टि की है। कि यह अनुवाद विल्कुल ठीक है। मैंने इस अनुवाद को पढ़ा। इसमें एक शलोक नं० ४ अध्याय नं० ९ का यूं अनुवाद किया गया है।

मुझी में है मखलूक सारी मकीं।
मगर मैं मकीं खुद किसी में नहीं।

शलोक का अर्थ बिलकुल साफ है। भगवान कृष्ण जी महाराज फरमाते है कि यह सारा संसार मुझी (ब्रह्म) में ही मौजूद है। मगर मैं। (ब्रह्म) स्वयं संसार की किसी वस्तु में नहीं हूं। मैं इस शलोक का अर्थ समझ न सका। समझने का यत्न

करता रहा लेकिन सफल न हुआ। चकित रहा क्योंकि यह पता न लगा कि भगवान कृष्ण का इससे क्या भाव है। कई मित्रों और पण्डितों से पूछता रहा लेकिन पूरा उत्तर न मिला और मेरी तसल्ली न हुई क्योंकि सब व्यक्तियों को यह विचार मिला हुआ है कि ईश्वर, परमात्मा, ब्रह्म, अल्ला, खुदा हर जगह, हर वस्तु, हर जीव जन्तु पक्षि में विद्यामान है। मैं सारी आयु यही समझता रहा और गाता रहा।

जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है।
कि हर शै में जलवा तेरा हू बहू है।

लेकिन इस शलोक में कहा गया है कि मैं इस संसार की किसी वस्तु में नहीं हूं। यह बात तो विपरीत हुई, विरुद्ध हुई। एक दूसरे का निशेध करती है इसलिए मैं इसका हल ढूंडता रहा।

आखिर पण्डित हंसराज जी दिल्ली वालों ने मुझे समझाने में मेरी सहायता की। इनकी दया से बात समझ में आगई तो मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ। हृदय खुश हो गया। एक प्रकार का आनन्द मिला। इच्छा हुई इस आनन्द में आपको भी सम्मिलित कर लूं। आप भी इस आनन्द का अनुभव करें इसलिए इसको लेखनीबध कर रहा हूं।

क्या कहते हैं भगवान कृष्ण महाराज जी सुनिऐ।

जब मानव नींद के समय स्वप्न अवस्था में चला जाता है तो मानव का मन स्वप्न में देखता है कि नगर है, लोग करोबार कर रहे हैं। गाड़ियें और मोटरें चलती हैं। बाजार हैं, बाग बगीचे हैं, स्कूल हैं कालज हैं आदि २।

यह स्वप्न का संसार स्वप्न लेने वाले व्यक्ति के सहारे है। लेकिन स्वयं व्यक्ति जो यह स्वप्न ले रहा है। इसकी चेतनता इस स्वप्न में नहीं है। यह स्वप्न कल्पित है, इसका कोई अधार नहीं है। जूं ही मानव की आख खुली स्वप्न की हस्ती समाप्त हो गई। इसी प्रकार यह संसार ब्रह्म का एक स्वप्न है। स्वप्न ब्रह्म के सहारे है लेकिन स्वयं ब्रह्म इस स्वप्न में नहीं है। इसकी अणुरूपी चेतनता स्वप्न में है।

इसलिए भगवान कृष्ण महाराज जी फरमाते हैं।

खफी से खफी है मेरी हस्ती बूंद।
मगर है मुझी से जहां की नमूद।
मुझी में है मखलूक सारी मकीं।
मगर मैं मकीं खुद किसी में नहीं।

(अध्याय नं० १ शलोक नं० ४)

न लोगों में हूं मैं न मुझ में हैं लोग।
ज़रा देखना यह मेरा राज योग।
मेरी आत्मा बायसे खासो आम।
नहीं मेरा लेकिन किसी में कियाम।
(अध्याय नं० १ शलोक नं० ५)

हवा गो चले ज़ोर से सर बसर।
इधर से उधर या उधर से इधर।
वह अकाश से जाये बाहर कहां।
समझ लो यूंही मेरे अन्तर जहां।
(अध्याय नं० १ शलोक नं० ६

अर्थात घड़े में पानी है लेकिन घड़ा पानी में नहीं है। बहुत सूक्ष्म बात है। जिनका मार्ग अध्यात्मिकता और केवल अध्यात्मिकता है। ब्रह्म को पाने की खोज में हैं वे पानी को पार करके घड़े से मिलने की प्रतीक्षा में हैं। इस भवसागर को पार करने के लिए और ब्रह्म, परमतत्व के दर्शनों के लिए आशारहित और वासनारहित होना अनिवार्य है। इसका हर कर्म फल की इच्छा रहित हो।

परम दयाल जी महाराज यही बात अपने सत्संगयों में फरमाया करते हैं कि सर्वाधार इस संसार में नहीं है।

मेरा कर्म

कल सहायक मन्त्री मानवता मन्दिर ने फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट का हिसाब दिखाया, उसने कहा कि आंखो का हस्पताल खुलने के बाद मन्दिर के कुल व्यय के लिए काम से कम 135000/- रुपया की धन राशो प्रति वर्ष चाहिए। सुना, रात को अपने अन्तर सोचा की ऐ फकीर। तू ने यह क्या किया ? एक गढ़े से निकला और दूसरे कुएें में गिरा। मगर अपना जीवन याद आता है। मुझ को बचपन से ही किसी वस्तु की तलाश थी। वह तलाश मुझ को दाता दयाल महर्षि शिव ब्रत लाल जी महाराज के चरण कमलों में ले गई। उस पवित्र विभूति ने मेरी उस तलाश को मिटाने के लिए मुझ पतित और अज्ञानी जीव को छाती से लगाया। जीवन की प्रत्येक दिशा में मुझे उत्साह, सहारा और शक्ति दी। सत्य वस्तु, सच्चाई और शान्ति का रास्ता बताया। जब में पंथ मैं आया था तो मैंने भी यह प्रण किया था कि अपना

अनुभव संसार को बता जाऊंगा और हजूर दाता दयाल जी महाराज ने भी फरमाया था कि चोला छोड़ने से पूर्व शिक्षा में परिवर्तन कर जाना। मुझे नहीं पता कि जो कुछ मैंने अनुभव किया वह ठीक है या ग़लत। आत्मा सत्य प्रिय है। जो कुछ मैंने गृहस्थि, शिष्य और गुरु होने की स्थिति में अनुभव किया वह मुझ को एक ऐसी अवस्था की ओर ले जा रहा है जहां न मैं, न तू, न गुरु, न चेला, न राम, न रहीम और न करीम। मगर अभी तक उस धुर धाम में मैं ठहर नहीं सकता। मालूम नहीं क्यों ? मैं यह कहने में विवश हूं कि या तो मेरे कर्म या इस संसार की रचना करने वाले की इच्छा।

मेरे इस कर्म भोग वश मैंने इन्सान बनो की आवाज़ उठाई। धर्मों और पंथों में जो रोचक और भयानक बातें धर्म और पंथ चलाने के लिए और दुनियां को पीछे लगाने के लिये कही गई, उनको मैंने साफ कर दिया। समझ में आया कि जब तक मनुष्य जीवन है वह परस्पर प्रेम, सहायता और सेवा के अधीन हैं। अध्यात्मिक जीवन भी नाम, ध्यान प्रकाश और शब्द का अधीन है। इसलिए मैंने मन्दिर में यथा

शक्ति अनाथों, अन्धों और ग़रीब विद्यार्थियों की सहायता करने का काम किया। आर्थिक हीन लोगों के लिये होमयोपैथिक दांतों और आंखों का हस्पताल खोला। कई जीव भ्रम और शंका ग्रस्त होते हैं, उन को अपने भविष्य अथवा भाग्य की चिन्ता होती है। इनके लिये ज्योतिष का प्रबन्ध किया। जो सज्जन साधन या अभ्यास करना चाहते हैं उनके लिए भी प्रबन्ध किया। मगर जब डिप्टी सैक्रेटरी ने मन्दिर का हिसाब बताया तो ख्याल आया कि इतना व्यय करना कठिन मालूम होता है। यदि मैं परदा रखता, जिस प्रकार मेरा रूप लोगो के अन्तर प्रकट होकर उनकी सहायता करता है, मरते समय ले जाता है और दवाईयें बताता है, भारत वर्ष में ही नहीं विदेशों में भी, तो जितना भी धन चाहता, मान चाहता, ले सकता था। मगर मेरी आत्मा ने नहीं माना।

मानव मन्दिर पत्रिका या अन्य किताबे जो मानवता मन्दिर में छपती है मैंने उन का कोई मुल्य नहीं रखा। मन्दिर के हसाब में प्रकाशन पर इस वर्ष के दस महीनों में 27000/ रुपया व्यय हो चुका है। विना मूल्य साहित्य बाटने का कारण मेरा ब्रह्मण के

घर का जन्म है। ब्रह्मण के लिए वेद बेचना पाप है। क्योंकि किताबों में जो कुछ लिखता हूं वह मेरा अमुभव है। इसलिए मैंने इस की कोई कीमत नहीं रखी। रात को सोचा कि माया के चक्कर में तो तु आ गया, अब बता तू क्या करेगा ? मेरा निर्णय यह है।

जो सज्जन मेरे साहित्य को पढ़ते है यदि उन की अत्मायें इस बात को मानती हैं कि मेरे इस काम द्वारा मानव जाति का भला हो सकता है तो वह मानवता मन्दिर की सहायता करें। मन्दिर में एक पैसा की हेरा-फेरी नहीं होती। ट्रस्ट है और विधिवत हसाब है। जब तक इस सहायता से काम चलेगा चलायूंगा। अगर न चला तो हस्पताल बन्द कर दूंगा। दाता का हुकम है कि शिक्षा बदल जाना। मानव मन्दिर जारी रहेगा। यदि किसी कारण यह भी न चल सका तो मौज मलिक। दाता दयाल के ऋण से उतोर्ण हो जाऊंगा। इसलिये जो लोग मानव मन्दिर पढ़ते हैं उनसे यह मेरी हाथ जोड़ कर प्रार्थना है कि पत्रिका का प्रकाशन बढ़ रहा है। जिन की रुची इस के पढ़ने में न हो वह न मंगवायें।

ऐ मेरी जिन्दगी बनाने वाले ? मेरे हैपने को बनाने वाले। तेरा प्रेम था। मालूम नहीं मैंने जो कुछ किया अथवा समझा, ठीक है या ग़लत है। मैं शरणागत हूं। जिस रास्ते तेरी मौज है उसी रास्ते से मुझें ले चल। अब उस दिन की प्रतीक्षा करता हूं जब अपनी हस्ती को खोकर उसी परम तत्व में चला जाऊं।

फकीर।

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट, होशियारपुर द्वारा बिना मूल्य बांटा जाने वाला साहित्य

1. **TRUTH ALWAYS WINS (English)**
   Written by His Holiness Pt. Faqir Chand Ji Maharaj.

2. अनुभवसार (हिन्दी)
   लेखक श्री कुबेर नाथ श्रीवास्तव, एडवोकेट, रसड़ा ।

3. मानव मन्दिर (हिन्दी)—मासिक पत्रिका ।

मिलने का पता :—

सैक्रेट्री :
मानवता मन्दिर, होशियारपुर ।

सूचना

मानव मन्दिर प्रेमियों को यह जान कर हर्ष होगा कि अमेरिका में हजूर परम दयाल जी महाराज अपने मिशन में अधिक व्यस्थ होने पर भी शारीरिक रूप से स्वस्थ हैं। कार पर सफर करके दूर २ नगरों में जाकर कभी एक और कभी दो सत्संग प्रतिदिन देने पड़ते हैं श्रद्धालु लोगों के अनुरोध पर Televison पर भी प्रवचन प्रसार करने पड़ते हैं। इस बार महाराज़ जी बिना किसी अर्थ व्याख्या के अंग्रेजी भाषा में सत्संग दे रहे हैं। उनके सब प्रवचन टेप रिकार्ड हो रहे हैं। समय पर यह प्रवचन छपेंगे। आशा है हजूर जून के अन्तिम सप्ताह वापस भारत पहुच जायेंगे।

सेक्रेट्री

मानवता मन्दिर

होश्यारपुर

Regd. No. 26265/74
MANAV MANDIR

P—Hsp—7.

1283

ADDRESS

To

Sri. A. Hanmanth Rao.
H. No. — 10-3-194/8
Humayun Nagar
Hyderabad. - 28.
A.P. 500028

From:

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.